2

स्मृतियों के यथार्थपरक आख्यान

शारदा कुमारी*

जुलाई के दूसरे पखवाड़े की बहुत ही अलसाई-सी सुबह थी। हवा न जाने कहाँ जाकर छिप बैठी थी। हवा की अनुपस्थिति का लाभ उठाते हुए मौसम पर अपना एकछत्र राज जमाए उमस बैठी थी। ऐसे उमस भरे दिन में दिल्ली के नगर निगम की पाठशाला में जाना कभी भी नहीं सुहाया। हालाँकि पाठशालाओं में जाना और बच्चों से गपियाना मुझे हमेशा से बहुत ही अच्छा लगता है पर बीते कुछ दिनों से न जाने मन क्यों कतराने लगा है। बात कुछ इस तरह समझ में आती है कि गोष्ठियों-सभाओं में जिस तरह के विद्यालयों की कल्पना की जाती है उससे कोसों दूर की हकीकत होती है। टूटी-फूटी चारदीवारी, बेतरतीबी से बने कमरे जिनमें बच्चे एक-दूसरे के ऊपर कुछ इस तरह से लुढ़कते हैं जैसे बोरे में बंद आलू, शौचालय से उठती दुर्गंध, धूल से अटे पड़े डेस्क-कुर्सियों, अध्यापकों व विद्यालय के अंदर दूसरे सदस्यों के कर्कश आदेश-निर्देश। कुल मिलाकर एक घुटन भरा माहौल और ऊपर से ये उमस। जैसे-तैसे हिम्मत जुटाई और चल पड़ी नगर निगम प्राथमिक पाठशाला 'नँगली सकराबती'।

बस कंडक्टर से ताकीद कर दी थी कि मैं इस क्षेत्र के लिए अनजानी हूँ, अत: नँगली सकराबती आने पर बता दे। शहर की सघन बस्तियाँ धीरे-धीरे लुप्त हो चली थीं और अब सड़क के दोनों ओर गौशालाएँ व पौधों की नर्सरियाँ दिखाई दे रही थीं। ये दृश्यावलियाँ आँखों को बहुत सुकून दे रही थीं। इन सबको निहारते-निहारते कब नँगली सकराबती आ गया पता ही न चला। उस वक्त स्टॉप पर उतरने वाली अकेली मैं ही थी। बस धूल उड़ाती चल पड़ी और मैं धूल के गुबार में खड़ी यह सोचने लगी कि कौन-सी राह चलें क्योंकि मुख्य सड़क के अतिरिक्त वहाँ तीन और रास्ते दिख रहे थे। कौन-सा रास्ता पाठशाला की ओर ले जाएगा, इसी उहापोह में थी कि दूर से आते कुछ बच्चे नज़र आए। पहचानने में तनिक भी देर न लगी कि ये निगम पाठशाला के बच्चे हैं। आज पेरिस क्या पूरी दुनिया के फ़ैशन उद्योग में डिज़ाइनरों की धूम मची है पर किसी ने सोचने की भी कोशिश नहीं की कि प्राथमिक स्तर के विद्यालयों के लिए सुंदर-सी वर्दी का डिज़ाइन बना दें। एक तो इन विद्यालयों में पढ़ रहे बच्चों पर गरीबी की मार और ऊपर से यह बेरुखी सी वर्दी। बचपन एकदम धूल-धूसरित सा हो उठता है।

बच्चे अपनी ही गति से चल रहे थे। कभी एक को आगे धकेलते तो कभी दूसरे को पीछे धकियाते।

* *वरिष्ठ प्रवक्ता*, डायट, सेक्टर 7, आर.के.पुरम, नयी दिल्ली

कभी कंधे पर लटकी पानी की बोतल उतारते, ढक्कन खोलते, बिना पानी पिए उसे बंद करते, फ़िर खोलते, अपने साथी को दिखाते, फिर बंद कर कंधे पर झुलाते बस इसी तरह की कवायदें करते थे। सात-आठ बच्चों की टोली जब मेरे नज़दीक पहुँची तो मैंने उनसे पूछा कि क्या वे मुझे सकराबती के स्कूल का रास्ता सुझाएँगे? उस टोली के दो बच्चों ने तपाक से कहा –

"चली आओ, हमारे पिछाई चली आओ।"

उस टोली में कुछ बड़ी-सी दिखने वाली लड़की ने बड़ी शालीनता से कहा –

"ओहाँ तो दो स्कूल हैंगे। कौन-सा स्कूल जाना चाहिब?"

इससे पहले कि मैं कुछ जवाब देती उस टोली की एक बाला बोली, "एक तो वो स्कूल जिसमें कोठिन वालों के बच्चा लोग पढ़ा करि और एक दूसरा स्कूल जिसमें गरीब का बच्चा जाई रहि?"

बड़ी तनाव भरी स्थिति में डाल दिया उस बच्ची ने। इस उम्र में इस तरह का सवाल ? भौंचक सी रह गई मैं तो। मेरे मुँह से सिर्फ़ इतना ही निकला –

"आप जिस स्कूल में जा रहे हैं वहीं ले चलो।"

सवालों की झड़ी-सी लग गई मेरे आगे।

"क्यों, नई मैडम हो क्या ?"

"रोज़-रोज़ आओगी क्या ?"

"कौन-सी कक्षा को पढ़ाओगी ?"

"कौन-सी मैडम की जगह पर बदली करोगी?"

"पैदल ही आया करोगी क्या ?"

"पूरी छुट्टी तक रुका करोगी क्या ?"

इन सवालों की झड़ी का जवाब तो मैं क्या ही दे पाती, स्कूल की तस्वीर मेरे सामने खिंचती जा रही थी जैसे कि –

"दो मैडमों को छोड़कर बाकी सभी मैडमें तो अपनी कार से आती हैं।"

"बड़ी मैडम को उनका बेटा छोड़ने आता है और वापसी में वे संतोष मैडम के साथ जाती हैं।"

"बच्चों को देर हो जाए तो पी. टी. आई. मैम गेट पर ही दबोच लेती हैं। देर से आने वालों की अलग लाइन बनती है।"

"पानी के लिए एक टैंकर आता है। उस समय हम खूब धमाचौकड़ी करते हैं।"

"बड़ी मैडम थर्मस में अपनी चाय घर से लाती हैं। पर बाकी मैडमें चाय भूरी चाची से बनवाती हैं।"

इससे पहले कि कक्षायी वातावरण की चर्चा हो पाती, स्कूल आ गया।

बड़ा मज़बूत-सा काले रंग का गेट और उस पर बड़ी खूबसूरती से लिखा विद्यालय का नाम।

गेट के दोनों तरफ़ खिलखिलाते अमलतास !

इससे पहले कि गेट पर मुझे कोई टोकता बच्चों ने दूर से ही घोषणा कर दी, "नयी मैडम आई हैं।" उत्सुकता-सा भरा सलाम ठोंका गया मुझे और मैं विद्यालय में आसानी से प्रवेश पा गई।

पी.टी. महोदया एक ताज़ी-सी संटी हाथ में लिए इधर-उधर डोल रही थीं। उस संटी को वे चाबुक की तरह हवा में लहरा रही थीं और ज़ोर से चीखती, "सारे चलो प्रेयर के लिए।" उनकी इस आवाज़ को सुनते

ही इधर-उधर डोलते बच्चे स्कूल के मुख्य परिसर की ओर दौड़ने लगते।

चारों तरफ़ नीम, गुलमोहर, अमलतास नज़र आ रहा था। गुड़हल के छोटे-छोटे पौधे भी अपना सिर उठाने की जुगत में थे। कहीं-कहीं सदा-सुहागन और फूलबटन की झाड़ियाँ भी थीं। यूँ कहिए कि विद्यालय परिसर की खूबसूरती बेमिसाल थी और 'पर्यावरण अध्ययन' के लिए सशक्त माहौल मुहैय्या किया जा रहा था।

यद्यपि मुझे रास्ता दिखाने वाली टोली ने "विद्यालय में एक नयी मैडम आई हैं" की घोषणा कर दी थी और बहुत से बच्चों ने मुझे घेरना भी चाहा तथापि मैं स्वयं को बचाती हुई बरामदे के एक खंभे की ओट में खड़ी हुई और प्रात:कालीन सभा के आयोजन की प्रतीक्षा करने लगी।

घंटी बजी, उसके थमने पर ड्रम की आवाज़ शुरू हुई, जब तक धपड़-धपड़ होती रही, बच्चे लुढ़कते-पुढ़कते इकट्ठा होते रहे। स्तरवार पंक्तियाँ बन ही रही थीं कि हर पंक्ति से कुछ मॉनीटरनुमा बच्चे आगे निकल कर आए और चीखने वाले अंदाज़ में "सावधान बिसराम" की उद्घोषणा कर हाथ जोड़ आँखें बंद कर खड़े हो गए। उनकी इस उद्घोषणा पर कुछ बच्चों ने बड़े सुस्ताए से अंदाज़ में शरीर को हिलाया-डुलाया। कुछ बच्चों ने बड़े जोशीले अंदाज़ में हाथ-पैर इधर-उधर पटके और आँख बंद कर हाथ जोड़कर खड़े हुए। ड्रम पर थाप पड़ी और खरखरी-सी आवाज़ आई 'प्रार्थना पोज़ीशन शुरू कर'।

इस आदेश के साथ ही बेसुरे से स्वर सुनाई दिए –

हे जग दाता बीसव बिधाता
हे सूख शांति निकेतन हे।
प्रेम के बंधून दीन के सिंधू
दुख दारिद्रय बिनाशक हे।

इस गायन के समय कुछ बच्चे बहुत ज़ोर से आँखें भींचे हुए थे। कुछ बीच-बीच में आँखें खोलकर इधर-उधर के दृश्य का जायज़ा ले रहे थे। कुछ अभी गेट से प्रवेश कर रहे थे। और जैसे ही प्रार्थना होते देखते वैसे ही दौड़ना शुरू करते। इनमें से किसी भी बच्चे पर पी. टी. मैडम की निगाह पड़ती तो अपनी संटी हवा में लहरातीं और उसी संटी से उन्हें अलग खड़े होने को कहतीं। यह शायद देर से आने वाले बच्चों की पंक्ति थी। इस दौरान अध्यापिकाएँ एक-दो के गुट बनाए खड़ीं गप्पबाजी कर रही थीं। आगे वाले बच्चे बड़ी गंभीरता से ईश्वर की भक्ति में लीन थे। पीछे वाले बच्चे अपने बचपने की स्वाभाविक प्रवृत्तियों को जी भर कर जी रहे थे।

कब बेसुरा-सा भक्ति गीत खत्म हुआ, कब देश के प्रति निष्ठावान बनने की शपथ ली गई, पता ही न चला और राष्ट्र गान शुरू हो गया।

राष्ट्र गान खत्म होते ही जैसे सब बच्चों की तंद्रा टूटी। सभी के सभी एक पैर और दायाँ हाथ आगे की ओर पटकते और अपनी पूरी ऊर्जा के साथ बोलते "भारत माता की – जय" इस नारे में समूचे स्कूल ने अपनी समूची ऊर्जा झोंक दी थी। आस-पास के दरख्त, लता युग्म, फूल, पत्तियाँ सभी इस बात के साक्षी बने।

नारे खत्म होते ही ड्रम की धप-धप पर कदमताल करते बच्चे अपनी कक्षाओं की ओर बढ़े। पहले से ही धूल-धूसरित बच्चे अपने कदमों से उठे धूल के गुबार में एकदम मदमस्तम 'अच्छी अपनी ठाठ फ़कीरी' का जैसे राग गा रहे हों।

इस पूरे आयोजन का दारोमदार पीटी महोदया पर जाता दिख रहा था क्योंकि पूरे समय उन्हीं की संटी हवा में लहराती दिख रही थी। बीच-बीच में आवाज़ें भी कान भेदतीं – "ऐ बेहहाई छोरी टाँगें सीधी कर।" "ओ दो चुटीली, बड़े फ़ैशन करके आई है। पढ़ने आई हो कि फ़ैशन परेड में भाग लेने?" सभी बच्चे निर्विकार भाव से इन शूल बाणों को सुन रहे थे। ऊपर से एकदम स्पंदनहीन पर निश्चय ही भीतर ज़रूर हाहाकार मचता होगा ऐसी निर्लज्ज वाणी से। इस तरह की बातें सुन लगा कि आसपास के पेड़-पौधों की पत्तियों का रंग फीका पड़ गया है, टहनियों की रूह कँपकँपा उठी, धरती भी यह सब सुनने की अपनी बेबसी पर रो उठी पर पी.टी. मैडम की संटी हवा में अपना चाबुक चलाती रही और उनकी जुबान सभी बच्चों के कानों में सीसे घोलती रही। समाज के सामंती विचारों का प्रतिनिधित्व करने वाली आवाज़ों का शोर बढ़ता ही जा रहा था कि प्रधानाचार्या महोदया की सवारी आ पहुँची। उनकी सवारी को देख सहायक कर्मचारियों में मानो एक होड़-सी मच गई। कोई दरवाज़ा खोलने को लपका तो किसी ने उनका पर्स सँभाला, किसी ने दूर से ही उन्हें सलाम ठोंका। मैं भी गुड़हल की ओट से बाहर निकल आई और अभिवादन कर अपना परिचय दिया व आने का मकसद बताया।

उन्होंने बहुत ही प्रसन्नता ज़ाहिर की और बताया कि मेरे लिए वाहन की सुविधा उपलब्ध करवाई जा सकती थी। नाहक ही मैं इतनी सबेरे आ गई।

प्रधानाचार्या ने बताया कि "अभी तो बच्चों को सैटल होने में टाइम लगेगा तब तक आप जलपान लें।"

लगभग आधा घंटा तो उनके कक्ष में बीता ही मेरा। चाय की चुसकियों के संग उनकी उपलब्धियों को घोल-घोल कर पीती रही।

वे मेरे साथ 'राउंड ' पर जाना चाहती थीं पर मेरी इच्छा अकेले ही जाने की थी। उन्हें समझाया कि वे अपने प्रशासनिक मसले देखें। मेरी इच्छा जानकर उन्होंने ज़ोर से अपनी एक सहयोगी को आवाज़ दी और आदेश दिया कि मुझे फलाँ-फलाँ कक्षा में ले जाया जाए क्योंकि इन कक्षाओं की अध्यापिका ईमानदारी से पढ़ा रही होंगी।

हर बात में अपनी नहीं चलती इसलिए अपने को वहीं की अध्यापिका के हवाले किया और उनके पीछे चल दी। उनकी ओर से जिस कक्षा को बेहतर पढ़ाई वाला घोषित किया गया था वहाँ पहुँचे तो देखा कि अध्यापिका श्यामपट्ट पर कुछ लिख रही है, और सभी बच्चे उस सामग्री को अपनी कापियों में उतार रहे हैं। अगली कतार में बैठे बच्चे श्यामपट्ट से उतार रहे थे, बाकी के बच्चे, अगल-बगल बैठे बच्चों से नकल मार रहे थे। कुछ उकड़ूँ बैठकर, तो कुछ उचक-उचक कर, कुछ बच्चे अपने पड़ोसी बच्चे के सिर को परे धकेलकर, कहने का मतलब है कि तरह-तरह से श्यामपट्ट पर लिखी जा रही सामग्री को देखने के हर संभव यत्न कर रहे थे। कभी-कभी कोई बच्ची कह

उठती, "मैडम जी, थोड़ा परे नूँ हटियौ।" मैडम जी कहतीं, "अरे बेसब्रों, पूरा लिखने तो दो, अगर हट गई तो लिखूँगी कैसे?" मेरे साथ आई अध्यापिका ने मेरे कान में फुसफुसाया "मैम, अगली कक्षा में चलें क्या? वहाँ भी इसी तरह जमकर पढ़ाई होती है।" मैंने उन्हें जता दिया कि मैं अभी यहीं रुकना चाहूँगी, वे जाना चाहती हैं तो जाएँ।

मैं कक्षा के थोड़ा और भीतर सरकी, अब कुछ बच्चों की नज़रें मुझ पर पड़ीं।

वे अपनी कॉपी पेन एक ओर पटक तुरंत सावधान की मुद्रा में खड़े हो गए बिना इस बात का ध्यान किए कि उनके इस तरह से यकायक खड़े होने पर आस-पास के बच्चे लुढ़क-पुढ़क रहे हैं। खड़े होकर उन्होंने सैल्यूट मारने की स्थिति अख्तियार की और ज़ोर से चिल्लाए 'गुडमार्निंग मै S S S S S S डम'। 'मैडम' शब्द को इतना अधिक समवेत स्वर में खींचा गया जैसे कि सबके सब ध्रुपद गायन शैली के धुरंधर गवैए हों।

उनके सत्कार का जबाव देकर मैंने उनमें से एक से पूछा, "क्या लिख रही हो?"

"वही लिख रही हूँ जो अनवरी लिख रही है।" बड़े निर्विकार भाव से मुझे उत्तर दिया गया।

"अनवरी क्या लिख रही है?"

"वही जो मैडम लिख रही हैं।"

"मैडम क्या लिख रही हैं?" मैंने पूरी ढिठाई बरतते हुए फ़िर पूछा।

"ओ सरयू बता न क्या लिख रही हैं मैडम", उस बच्ची ने अपने से तीसरे स्थान पर बैठी लड़की को झिंझोड़ा। अब सरयू थोड़ा आगे सरकी, चेहरे पर प्रौढ़ता का भाव लाते हुए बोली –

"आप नई वाली मैम हो न, इसको न पढ़ना नहीं आता। ये बस कापी पर लिख लेती है। मैडम 'मेरी माँ' पर निबंध लिखवा रही हैं। आप पढ़ लेती हैं न, वहीं से पढ़ लो।"

अब तक अध्यापिका को मेरी उपस्थिति का पता चल गया था और वे लिखाई का काम छोड़कर मेरी ओर आने का उपक्रम करने लगीं। चूँकि ज़मीन पर चारों तरफ़ बच्चे खड़े हुए थे, आने-जाने की जगह बनने की संभावना न के बराबर थी, मैं ही रास्ता बनाती उनकी ओर चल पड़ी, जब श्यामपट्ट पर नज़र पड़ी तो लिखा पाया –

"मेरी माँ का नाम ---------- है।

वह प्रात: चार बजे उठती हैं।

वह स्नान आदि कर मंदिर जाती हैं। फ़िर वह सबको चाय बनाकर देती हैं। ---------- इस प्रकार कम से कम 10 वाक्य लिखे थे जो बयाँ कर रहे थे कि माताएँ किस तरह से तरह-तरह के कामों में जूझी रहती हैं।

मैंने उनसे पूछा, "क्या आपको लगता है कि सभी बच्चों की माताओं की यही दिनचर्या होगी?"

"क्यों कुछ अनीतिपूर्ण बात लिख दी क्या किसी 'माता' के बारे में, आमतौर पर यही तो दिनचर्या होती है किसी भी भारतीय माँ की।" उन्होंने अपने अनुभवों की गठरी खोली। अभी वे अपने ज्ञान की संचित राशि से मुझे लाभान्वित करतीं पर मेरे साथ भेजी गई अध्यापिका ने मुझे बाँह से लगभग खींचते हुए कहा –

"चलिए न दूसरी कक्षा में।"

दूसरी कक्षा में एकदम सन्नाटा-सा था शायद बच्चे कक्षा में न हों। पर नहीं, एक बच्ची की आवाज़ आ रही थी –

"एक पौधा लो, उसे अच्छी तरह से देखो। क्या तुम इसे अच्छी तरह से देख पा रहे हो? इसकी जड़ को देखो, इसे छुओ।"

बच्ची का उच्चारण बहुत स्पष्ट था। बहुत सलीके से पुस्तक हाथ में लिए वह कोई पाठ पढ़ रही थी और बाकी बच्चे अपने-अपने सामने पुस्तक का वही पाठ खोले हुए उस पर आँखें गढ़ाए हुए थे। मेरे साथ आई अध्यापिका ने कहा – "देखा मैम, कैसा डिसीपिलिन है। हमारी हर कक्षा में आपको इसी तरह का सुई पटक सन्नाटा मिलेगा। हम बच्चों को फ़ालतू की बातें करने नहीं देते। उन्हें पढ़ाई के काम में जोते रहते हैं।" इससे पहले कि मैं कोई उत्तर देती, एक अध्यापिका ने आकर सूचना दी कि मुख्य अध्यापिका ने मेरे लिए जलपान का प्रबंध किया है और तुरंत पहुँचने के लिए कहा है। उन्होंने कक्षाओं में पढ़ा रही अन्य अध्यापिकाओं को भी कहा कि थोड़ी देर के लिए कक्षाएँ मॉनीटर के हवाले करो और चाय के लिए चलो।

स्कूली जीवन की इन तमाम विद्रूपताओं और जटिलताओं से रूबरू होने का यह मेरा पहला अनुभव नहीं है। शिक्षा के मरुस्थल में अध्यापकों की धरती सहृदयता के बरस्क वैचारिकता व मानवीयता के नये मूल्य कैसे आरोपित किए जाएँ यह सवाल धीरे-धीरे चाय की चुस्कियों में डूबता जा रहा था।

❑❑❑